इकाई 6 पंचायती राज और स्थानीय स्वशासन

संरचना

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 संकल्पनात्मक रूपरेखा

6.3 पंचायती राज संस्थाओं (PRI) का विकास

6.4 संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 (CCA, 1992)

6.5 कृषि विकास में PRI की भूमिका

6.5.1 फसल विकास

6.5.2 ऋण और सहयोग

6.5.3 फसल बीमा

6.6 2001 के बाद के वर्षों में PRI की प्रगति की समीक्षा

6.7 PRI और भूमि अधिग्रहण

6.8 सारांश

6.9 शब्दावली

6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

6.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आप:

- सामान्य रूप से विकास संबंधी मुद्दों से और विशेष रूप से कृषि विकास से ''संस्थागत अर्थशास्त्र'' की संकल्पनाओं को संबद्ध कर सकेंगे;
- भारत में पंचायतीराज संस्थाओं (PRIs) के विकास का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत कर सकेंगे;
- 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 के मुख्य प्रावधानों की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे;
- 2001 में PRI पर कार्यदल की रिपोर्ट में की गई ''संस्थागत महत्त्व'' की मुख्य सिफारिशें गिना सकेंगे;
- 2001 के बाद के वर्षों में PRI के कार्यकरण की समीक्षा कर सकेंगे; और
- प्रस्तावित भूमि अधिग्रहण अधिनियम में उसकी मुख्य विशेषताओं की चर्चा करते हुए ''भूमि अधिग्रहण'' की समस्या स्पष्ट कर सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हमने देखा कि भूमि सुधार उपायों के सफल क्रियान्वयन के लिए ''राजनीतिक'' और ''सामाजिक'' क्षेत्रों में साथ साथ सुधार प्रारंभ करना आवश्यक है। हमने यह भी नोट किया कि भारतीय अर्थव्यवस्था के कृषि ढांचे में छोटे और सीमांत किसानों की बहुतायत है। बाजार व्यवहार के प्रति गरीब किसानों की इतनी बड़ी संख्या की अलाभकृत संवेदनशीलता के कारण 1991 से चल रही सरकार की बाजार उन्मुखी नीतियों ने कृषि सेक्टर को इस प्रकार प्रभावित किया है कि नीति योजनाकारों और अनुसंधानकर्ताओं की चिन्ताएं समान रूप से जागृत हुई हैं। इसी अनुभूति के कारण सरकार ने इसके स्वरूप को अधिक ''समावेशी'' बनाने के लिए अपनी विकास संबंधी रणनीति की पुन:रचना की है। परन्तु बाजार बनाम राज्य पर बहस में सरकार की भूमिका ऐसी परिस्थितियों की रचना तक सीमित हो जाती है जो बाजार को दक्षतापूर्वक कार्य करने में सक्षम बना सके। इस पृष्ठभूमि पर इस इकाई में हम संविधान संशोधन अधिनियम 1992 (CAA, 1992) के माध्यम से भारत सरकार द्वारा किए गए महत्त्वपूर्ण उपायों के बारे में अध्ययन करेंगे। इसका उद्देश्य स्थानीय स्वशासन द्वारा लोकतंत्री विकास के लिए पंचायतीराज संस्थाओं (PRI) का सृजन कर निम्नतम स्तर की इकाई (अर्थात् ग्राम) का सशक्तीकरण करना था; ये अधिनियम भारत में शासन व्यवस्था के लोकतंत्रीकरण में बहुत बड़ा कदम है। हम (1992 में CAA प्रभावी होने के लगभग एक दशक बाद PRI के कार्यकरण की समीक्षा करने के लिए 2001 में गठित) कार्यदल की विशिष्ट क्रियाविधि प्रारंभ करने की आवश्यकता विषयक प्रमुख सिफारिशों के बारे में भी अध्ययन करेंगे ताकि PRI कृषि सेक्टर को अधिक समुत्थानशील बनाने में योगदान कर सकें। अंत में, हम यह बताते हुए ''भूमि अधिग्रहण'' पर चल रही बहस के संक्षिप्त उल्लेख भी से पूर्व कि इस संबंध में PRI कैसे प्रभावशाली भूमिका निभा सकते हैं। फिर भी हम इन तीन मुख्य पहलुओं के अध्ययन से पूर्व संकल्पनात्मक ढांचे पर संक्षिप्त विचार करेंगे जिसे आर्थिक/संस्थागत विकास के मुद्दों से संबद्ध ''संस्थागत अर्थशास्त्र'' द्वारा प्रदान किया गया है, इसके बाद भारत में PRI के विकास का विहंगावलोकन करेंगे।

6.2 संकल्पनात्मक रूपरेखा

संस्था: संस्थाओं का संबंध समाज में लोगों का उनके दिन प्रति दिन के कार्यकलाप में अवसरवादी व्यवहार कम करने के लिए स्थापित क्रिया विधि से है। मोटे तौर पर संस्थाएं दो प्रकार की हैं: आंतरिक संस्थाएं और बाह्य संस्थाएं। आंतरिक संस्थाएं समय के चलते प्राप्त अनुभवों से विकसित होती हैं। ऐसे अनुभवों को, जिन्होंने विगत में जटिल मुद्दों के समाधान के रूप में कार्य किया है, कालान्तर में रीतिरिवाज, नैतिक मानदंडों, व्यापार आदि के मामलों में परम्परा के रूप में कार्य करने के लिए समाविष्ट किया जाता है। इसलिए वे समुदाय में सामाजिक और व्यापार लेन-देन का संचालन करने के लिए ''स्वीकृत मानदंड'' के रूप में कार्य करती हैं। आंतरिक संस्थाओं के उल्लंघनों को सामान्यतया अनौपचारिक रूप में निपटाया जाता है, जैसे सामाजिक बहिष्कार। दूसरी ओर, बाह्य संस्थाएं, राजनीतिक और प्रशासनिक मशीनरी (जैसे विधायन द्वारा बनाए गए कानून के माध्यम से लगाए/लागू किए गए औपचारिक

प्रतिबंध हैं। इस प्रकार सामान्यतया संस्थाएं मानवीय क्रियाओं की नियामक हैं जो लेन-देन (सौदों) को पूर्वानुमेय बनाकर अवसरवादी और सनकी व्यक्तिगत व्यवहार को नियंत्रित करती है। इस प्रकार, प्रभावकारी संस्थागत मानदंड (या तो सामाजिक या कानूनी) के अभाव में, गरीब पट्टेदार के विरुद्ध जमींदार का शोषणकारी व्यवहार, इसका उदाहरण है।

पंचायती राजः शब्द ''पंचायत'' का शाब्दिक अर्थ है, ''पांच बुद्धिमान सम्मानित बुजुर्गों की परिषद'' जिनकी राय और विचार विवादों को सुलझाने या कार्य संचालन के लिए समुदाय में स्वीकृत किए जाते हैं और बंधनकारी होते हैं।

पंचायती राज की परम्परागत भावना में, (जैसा कि महात्मा गांधी ने वकालत की थी, और ''ग्राम स्वराज'' की भावना के अर्थ में किया था), सरकार के विकेंद्रीकृत स्वरूप का उल्लेख किया गया है जिसमें प्रत्येक गांव न केवल अपने स्वयं के कार्यों के लिए उत्तरदायी था बल्कि संस्थागत व्यवस्था के रूप में भी कार्य करता है ताकि गांव स्वायत (अर्थात् आत्म निर्भर) प्रशासनिक इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें। शब्द के आधुनिक अर्थ में पंचायतीराज का संबंध उस शासन व्यवस्था से है जिसमें ग्राम स्तर पर ''ग्राम पंचायतें'' तीन स्तरों (अर्थात् ग्राम, खंड और जिला) की व्यवस्था में प्रशासन की बुनियादी इकाई होती है।

संचालन लागतः सुसंगत प्रश्न हैः संस्थाएं क्यों होनी चाहिए या यदि कोई संस्था नहीं है तो क्या होता है? व्यक्ति का आधारभूत उद्देश्य लाभ प्राप्त करना है और राज्य को अपनी समृद्धि (अर्थात् राष्ट्रीय आय) बढ़ानी है। सामाजिक या कानूनी संस्थाओं के अभाव में पक्षों या आर्थिक एजेंटों के बीच विवाद लंबे समय तक चल सकते हैं और इससे व्यापार को क्षति हो सकती है। इसलिए संस्थागत व्यवस्था का उद्देश्य कानून का शासन स्थापित करना है, जिससे पहले ही विवादों को नियंत्रित किया जाता है और जब वे उत्पन्न होते हैं तो उनका निपटान ऐसे तरीके से किया जाए जिससे व्यक्तिगत/अर्थव्यवस्था की क्षतियां न्यूनतम होती हों। इस दृष्टि से संस्थाएं ऐसे नियमों के समूह हैं जिनके प्रवर्तन से अर्थव्यवस्था में ''संचालन लागत'' कम करने में सहायता मिलती है, जिनका उद्देश्य राष्ट्र की संपत्ति या व्यक्ति का लाभ अधिक से अधिक करने के लिए व्यक्तियों का व्यवहार नियंत्रित करना है। इसी दृष्टि से प्रसिद्ध अर्थशास्त्री, रोनाल्ड कोस ने माना कि ''संचालन लागत'' के अभाव में किसी भी संपत्ति (अर्थात् संपत्ति स्वामित्व के अधिकार जिसमें संपत्ति किसी भी प्रकार की हो, जैसे भौतिक, बौद्धिक, सामाजिक आदि) का आबंटन समानरूप से सफल होगा।'' कोस प्रमेय जैसी आदर्श स्थिति वास्तविकता में विद्यमान नहीं हो सकती है, इसलिए संस्थाओं का उद्देश्य ऐसी व्यवस्था सुनिश्चित करना है जिसमें आबंटन इष्टतम हो, अर्थात् समाधान स्वरूप में हित अधिकतमीकरण लागत न्यूनतमीकरण हो।

सूचना विषमताः व्यापार या संविदा/विवाद के समझौतों में सम्मिलित पक्षों का लेन-देन व्यय या संविदा के उन पक्षों के पास उपलब्ध सूचना प्रत्यक्षतः भिन्न होंगी। परन्तु यह अपनी विशेषता में मूलतः असमान होती है, अर्थात् संचालन या विवाद में लगे हुए सभी पक्षों के लिए यह पूर्णतः एक जैसी नहीं होती है। संस्थागत क्रियाविधि का उद्देश्य इस सूचना विषमता को कम करना है। उदाहरण के लिए,

अशिक्षित किसान उस जमींदार से अपने ठेके की वास्तविक शर्तें नहीं जान सकता है जो गरीब पट्टेदार श्रमिक को हानि पहुंचाने के लिए उसमें हेराफेरी कर सकता है। दूसरी ओर, शिक्षित किसान सतर्क हो सकता है और अपने हितों की रक्षा स्वयं कर सकता है। इस प्रकार की स्थिति में राज्य का उद्देश्य संस्थाओं और अभियानों के माध्यम से शैक्षिक और सूचनात्मक सेवाओं का विस्तार करना है, और इससे कम सुविधाप्राप्त समुदाय का सशक्तीकरण करना है।

संपत्ति अधिकार: हम इकाई 5 से पहले ही जानते हैं कि संपत्ति का स्पष्ट हक भूमिधारक को संस्थागत ऋण लेने का अधिकार देता है। परन्तु ऐसे स्पष्ट संपत्ति अधिकारों का पक्ष प्राय: उन राजनीतिक दलों द्वारा नहीं लिया जाता है। वे जो उन प्रोत्साहनों को बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं जिनसे वर्ग विभाजन से प्राप्त होने वाली स्थिति को भुनाने में अपना लाभ देखते हैं। इसलिए राजनीतिक सुधार वह सेतु है जो स्वतंत्रता और व्यवसाय/आय के व्यक्ति के अधिकारों के सम्मान पर आधारित अधिक स्वच्छ राजनैतिक लक्ष्यों/उद्देश्यों के लिए मार्ग प्रशस्त करता है। साथ साथ किए गए संस्थागत सुधार और राजनीतिक सुधार समाज/अर्थव्यवस्था में ''सूचना विषमता'' और ''संचालन लागत'' न्यूनतम करने में सहायक होते हैं। इन दोनों न्यूनीकरणों का संयुक्त प्रभाव राज्य में उस प्रवृत्ति का निर्माण करता है जो संपत्ति अधिकारों का अधिक स्पष्ट ढांचा स्थापित कर सके। दूसरे शब्दों में, विद्यमान संपति अधिकार की व्यवस्था वर्तमान राजनीतिक ढांचे/व्यवस्था की गुणवत्ता का सूचक है। राजनीतिक व्यवस्था की परिपक्वता अर्थव्यवस्था में सुदृढ़ संपत्ति अधिकारों के विकास के लिए आवश्यक और पर्याप्त दोनों दोनों प्रकार की शर्त है।

स्थानीय शासन: मोटे तौर पर स्थानीय स्वशासन की परिभाषा कुशल शासन व्यवस्था प्रदान करने के लिए सामूहिक कार्रवाइयों के अनुसरण में औपचारिक संस्थाओं की और अनौपचारिक मानदंडों, तंत्रों, सामुदायिक संगठनों आदि की प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष भूमिकाएं सम्मिलित करने की दृष्टि से की गई है। इसमें गतिशील रहन सहन, कार्यरत और पर्यावरण की दृष्टि से संरक्षित स्वशासी समुदायों के विविध उद्देश्य शामिल हैं। संक्षेप में, यह लोगों का जीवन स्तर समृद्धशाली बनाने के बारे में है।

संस्थागत विकास और आर्थिक विकास: औपचारिक दबाव, जैसे व्यवहार के मानदंड, परम्पराओं, आचार संहिता आदि प्रौद्योगिकीय और जनसांख्यिकीय परिवर्तनों के स्थिर स्तरों द्वारा नियंत्रित स्थितियों के लिए अच्छा कार्य कर सकते हैं। परन्तु आधुनिक समय में प्रौद्योगिकीय और जनांकीय/दोनों प्रभाव गतिशील हैं। इस दृष्टिकोण से आंतरिक संस्थाएं (अर्थात् मानदंड और रीतिरिवाज) आवश्यक हैं, परन्तु, आर्थिक विकास के लिए पर्याप्त नहीं हैं। संस्थागत विकास का मुख्य मुद्दा ऐसे आर्थिक वातावरण के लिए पर्याप्त नहीं है जो उत्पादकता को प्रेरित कर सके। इसके लिए राजनीतिक और आर्थिक दोनों संस्थाओं का पर्याप्त विकास अपेक्षित है। इस परिप्रेक्ष्य से देखें तो आर्थिक विकास को संस्थागत विकास के बराबर मानना चाहिए।

बोध प्रश्न 1

लगभग 50 शब्दों में उत्तर दीजिए।

1) ''पंचायती राज'' सरकार की व्यवस्था, जैसी कि महात्मा गांधी ने, परिकल्पना की थी, और उसके आधुनिक अर्थ के बीच अंतर बताइए।

.....

.....

.....

.....

2) रोनाल्ड कोस ने ''संस्थाओं'' पर अपनी प्रमेय कैसे अभिगृहीत की? वास्तविकता में, इस संबंध में ''मध्य मार्ग'' कैसे निकला?

.....

.....

.....

.....

3) ''सूचना विषमता'' कृषि पर कैसे प्रभाव डालती है? संक्षेप में उदाहरण सहित बताइए।

.....

.....

.....

.....

4) ''संपत्ति अधिकारों के अधिक स्पष्ट ढांचे की स्थापना'' ने ''सूचना विषमता'' और ''संचालन लागत'' के न्यूनीकरण के संयुक्त प्रभाव को कैसे प्रभावित किया?

.....

.....

.....

.....

5) क्या आप इस कथन से सहमत हैं कि ''संस्थागत विकास का अभिप्राय आर्थिक विकास है''?

.....

.....

.....

.....

6.3 पंचायती राज संस्थाओं (PRI) का विकास

ग्राम पंचायत नाम की संस्था भारत में बहुत लंबे समय से विद्यमान है। अठारहवीं शताब्दी तक पंचायतों ने स्थानीय प्रशासन की प्रभावशाली इकाई के रूप में ग्राम समुदाय को प्रभावित करने के अधिकांश कार्य किए। ब्रिटिश शासन के दौरान विभिन्न प्रांतों ने ग्राम पंचायत अधिनियम पारित किए। बल्कि इन अधिनियमों के अधीन बनाई गई पंचायतें लोकतांत्रिक ढंग से चुने गए निकाय नहीं थे, बल्कि सरकार द्वारा सदस्यों के नामांकन द्वारा बनाए गए थे। यहां तक कि नई भारत सरकार, जिसने 1950 में अपना संविधान अंगीकृत किया, (और संघ (केंद्र) और राज्य स्तरों पर सरकारें गठित करने के लिए लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित सदस्यों के लिए विस्तृत प्रावधान किए) ने भी इसे सुस्पष्ट संवैधानिक अनिवार्यता बनाए बिना ही छोड़ दिया था। परन्तु उसने निम्नतम स्तर लोकतांत्रिक संस्थाओं का महत्त्व स्वीकार किया, और यह निर्धारित किया (राज्य नीति के मार्गदर्शी सिद्धांतों के अनुच्छेद 40 में) कि ''राज्य ग्राम पंचायतों को अपेक्षित शक्तियां और प्राधिकार देते हुए उन्हें गठित करने के लिए कदम उठाएंगे ताकि वे स्थानीय स्वशासन की इकाइयों के रूप में कार्य कर सकें।'' इस प्रकार PRI संविधान के अधीन राज्य विषय बने।

वर्ष 1952 में प्रारंभ किये गए सामुदायिक विकास कार्यक्रमों (COPs) में PRI को लोगों की सहभागिता जुटाने का राजनीतिक कार्य सौंपा गया था। पांच वर्ष बाद 1957 में CDP में सार्वजनिक सहभागिता के स्तर का आकलन करने और ऐसे उपायों की सिफारिश करने के लिए एक समिति (बलवंत राय मेहता समिति) का गठन किया गया था, जिनसे लोगों की सहभागिता बढ़ाई जा सके। समिति ने सांविधिक रूप से निर्वाचित स्थानीय निकायों के गठन, और उन्हें आवश्यक संसाधन/शक्ति/प्राधिकार सौंपने की सिफारिश की ताकि विकेंद्रीकृत प्रशासनिक व्यवस्था स्थानीय निकायों के अधीन कार्य कर सके। उसने यह भी सिफारिश की कि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण की मूल इकाई ''खंड'' होना चाहिए। समिति ने प्रत्येक खंड के लिए पंचायत समिति नाम के कार्यपालक निकाय सहित गांव (गांवों के समूह) के लिए प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित पंचायतों का भी सुझाव दिया। यह भारत में 'पंचायती राज व्यवस्था' की उत्पत्ति है। यद्यपि लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण का उद्देश्य स्वीकार करते हुए पंडित जवाहर लाल नेहरू ने भी इस प्रयास का 'नए भारत के संदर्भ में सबसे अधिक क्रांतिकारी और ऐतिहासिक कदम' के रूप में वर्णन किया था।

इसके बाद, प्राय: सभी राज्य सरकारों ने (त्रिपुरा और अरुणाचल प्रदेश को छोड़कर) अनेक कदम उठाए परिणामस्वरूप राज्यों में खंड केंद्रित विकास में प्रगति भिन्न-भिन्न प्रकार से हुई। अगली बड़ी समीक्षा 1978 में अशोक मेहता समिति द्वारा की गई जिसने पंचायतीराज की अभिकल्पना को ही संस्था का रूप देने की सिफारिश की। पंचायती निकायों द्वारा ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के प्रभावशाली क्रियान्वयन के लिए जरूरी समझे गए विकास संबंधी दबाव और तकनीकी विशेषता प्राप्ति की समीक्षा के बाद निश्चित सुझाव और सिफारिशें करने के लिए भिन्न-भिन्न कार्य दल बनाए गए थे। एक ऐसा ही दल एम. एल. दान्तेवाला (1977) की अध्यक्षता में था, और बाद में सी.एच. हनुमन्था राव (1982) की अध्यक्षता में गठित दल ने भी

पंचायत निकायों की पुनर्संरचना पर दूरगामी सिफारिशें की। दोनों दल यह सिफारिश करने में एकमत थे कि आधारभूत विकेंद्रीकृत योजना कार्य जिला स्तर पर होने चाहिए। उन्होंने ये दो मुख्य सिफारिशें की हैं:

- विकेंद्रीकृत योजना आगे बढ़ाने के लिए संस्थागत क्रियाविधि अधिक व्यापक आधार की होनी चाहिए। ऐसी संस्थाओं (पंचायतीराज संस्थाओं/PRI के माध्यम से) को जिला योजना प्रक्रिया में प्रमुख भूमिका निभानी चाहिए;
- उपर्युक्त के लिए, स्थानीय प्रतिनिधियों की सक्रिय भागेदारी होनी चाहिए। PRI को स्थानीय निर्णय करने में पर्याप्त स्वायतत्ता दी जानी चाहिए।

1980 की दशाब्दी के मध्य में भारत में स्थानीय स्वशासन ढांचों को पुन: अधिक सक्रिय किया गया। कृषि और ग्राम विकास कार्यक्रमों में उन्हें संबद्ध किया गया। इससे नए प्रभावशाली आंदोलन का अविर्भाव हुआ। इसके दो कारण हैं। पहला, उसमें सरकार का ये दृढ़ विश्वास था कि (i) केंद्रीय स्थान से शासन करने/योजना बनाने के लिए भारत बहुत विशाल देश है; और (ii) इसलिए बहुत से कार्यों का उत्तरदायित्व स्थानीय स्तर पर होना चाहिए जिससे आगे चलकर अधिक जवाबदेही होगी। यद्यपि सरकार को भय था कि आबंटित संसाधनों का दुरुपयोग भी हो सकता है (अर्थात् प्रशासनिक प्राधिकारों के विस्तार के कारण गलत खर्च हो सकता है जिस पर बाद के हुए अध्ययन ने अनुमान लगाया था कि विकास पर खर्च किए गए प्रत्येक रुपए में से केवल 17 पैसे वास्तविक अंतिम लाभभोगी के पास जाते हैं, अर्थात् विकास प्रकतयों के क्रियान्वयन में सम्मिलित प्राधिकारियों के विस्तार के कारण छीजन का प्रभाव इतना अधिक है)। यह माना गया था कि आगे चलकर लोकतांत्रिक नीतियां ऐसे दुरुपयोग का ध्यान रखेंगी। इसे रोकने के लिए अधिक गरीब समूहों, जैसे अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों और महिलाओं के लिए संस्थागत उपायों के रूप में राजनीतिक और आर्थिक अधिकार की वकालत की गई। दूसरा मुख्य कारण था कि भारत की प्रारंभिक कृषि योजना व्यवस्थाएं स्वरूप में रैखिक थीं (अर्थात् वे नहर/ट्यूब वेल (नलकूप) और HYVs पर अधिक बल देते थे) जिसके फलस्वरूप अनुकूल क्षेत्र/अनुकूल फसल रणनीति अपनाई जाती थी। चूंकि इस नीति पर कई बड़े प्रश्न उठाए गए, इसलिए अब कृषि जलवायु योजना पर बल दिया गया। एक बार फिर स्थानीय सहभागिता और स्वयंसेवी संगठनों की आवश्यकता को प्रमुखता मिली। ''संसाधन आबंटन'' और ''निर्णयन'' से संबद्ध मुद्दों से ''रोजगार और ग्राम विकास के लिए विशेष कार्यक्रमों'' के एकीकरण पर भी प्रमुखता से ध्यान दिया गया। कई अन्य आकलन और समीक्षा/अध्ययनों के निष्कर्षों से इन समस्याओं ने सरकार को अपनी सातवीं योजना के प्रलेख में इस प्रकार रिकार्ड करना पड़ा: ''यह देखा गया है कि जहां कहीं PRI को सक्रिय रूप से शामिल किया गया है, ग्राम विकास कार्यक्रमों का क्रियान्वयन बेहतर हुआ है और लाभभोगियों का चुनाव और प्रकल्पों की अभिकल्पना अधिक संतोषजनक रही है। इसलिए विकास कार्यक्रमों को अधिक अर्थपूर्ण बनाने के लिए जनप्रतिनिधियों को संबद्ध करना आवश्यक है और विभिन्न रोजगार और गरीबी निवारण कार्यक्रमों की अभिकल्पना निरूपण/क्रियान्वयन के लिए PRI को शामिल करने के अलावा कोई अन्य बेहतर साधन नहीं है।''

इसलिए यह पहल कार्यों और प्रयासों के उपर्युक्त अनुक्रम का परिणाम है कि मूल पंचायती राज विधेयक (1989) का उद्देश्य न केवल शक्ति का विकेंद्रीकरण करना था बल्कि SC, ST और महिलाओं जैसे अधिक गरीब वर्गों को राजनैतिक अधिकार देना भी था जो भूमिहीन श्रमिकों और कारीगर समुदाय का बहुत बड़ा भाग है। इसके अलावा, ऐसे अधिक गरीब वर्गों के लिए आरक्षित सीटों की कुल संख्या में से तीस प्रतिशत सीटें SC/ST समुदाय की महिला सदस्यों के लिए आरक्षित की जाती हैं। राज्यों के विधान मंडलों को भी सलाह दी गई है कि वे भी पंचायतों को ऐसी शक्तियां और प्राधिकार दें जो उन्हें स्वशासन की संस्थाओं के रूप में कार्य करने की क्षमता के लिए अपेक्षित हों। परन्तु प्रक्रिया विलंबित की गई और राज्यों को दी गई बहुत विवेकाधिकार शक्ति के कारण बहुत से मूल प्रावधान कमजोर रह गए। इस पर भी बहुत मुख्य विशेषताएं जैसे (i) अनिवार्य चुनाव; (ii) सामाजिक रूप से सुविधावंचित वर्गों के लिए आरक्षण (iii) संसाधनों और शक्तियों का हस्तांतरण; और (iv) इन में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण राष्ट्रव्यापी रोजगार योजनाओं के लिए ग्राम स्तर पर संसाधनों का आबंटन, जैसे जवाहर रोजगार योजना (JRY) राज्य सरकारों द्वारा अधिनियमित विधायनों में रहा। अधिक जवाबदेही और सहभागिता सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक ग्राम की वार्षिक कार्ययोजना पर इस बात का ध्यान रखते हुए ग्राम पंचायत में चर्चा करना आवश्यक था कि ऐसे कार्यों को प्राथमिकता दी जाती है जो समुदाय के कमजोर वर्गों के लिए लाभप्रद हो। इस प्रकार इन सभी प्रयासों के फलस्वरूप पंचायतों को JRY आदि जैसे कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सक्रियता से सम्मिलित किया गया, उनका वास्तविक निष्पादन उतना अधिक प्रभावशील नहीं रहा जितनी आशा की गई थी। दूसरे शब्दों में, विकास कार्यों की योजना और क्रियान्वयन प्रक्रिया में, सरकारी नौकरशाहों द्वारा निभाई गई प्रमुख भूमिका, अभी भी एक वास्तविकता थी जो मुख्यत: विकास कार्य की योजना और क्रियान्वयन अवस्थाओं में PRI के एकीकरण की कमी के कारण थी। ऐसी अंतर्निहित दुर्बलताएं समाप्त करने के लिए 1991 में सरकार ने पंचायत प्रणाली के संपूर्ण मुद्दे को केंद्र में लाने के लिए अपेक्षित राजनीतिक समर्थन जुटाने की व्यवस्था की और 1991 में संविधान (72वां संशोधन) विधेयक प्रस्तुत किया। बाद में विधेयक 1992 में 73वां संविधान संशोधन अधिनियम के रूप में अधिसूचित किया गया था।

6.4 संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 (CAA, 1992)

अधिनियम ने 'पंचायत' की परिभाषा भारत के संविधान के अनुच्छेद 243 ख के अधीन संस्थापित स्वशासन की 'संस्था' के रूप में की है। अधिनियम ग्राम, खंड (यदि राज्य की जनसंख्या 20 लाख से अधिक है) और जिला स्तरों पर पंचायतों के गठन का प्रावधान करता है (इन्हें विशेष रूप से क्रमश: ग्राम सभा, खंड पंचायत, और जिला परिषद नाम दिए गए हैं।) CAA, 1992 का मुख्य आग्रह निम्नलिखित के संबंध में है :

(i) ''ग्राम सभाओं को संविधानिक दर्जा प्रदान करना; (ii) पंचायतों का तीन स्तरीय प्रशासनिक ढांचा बनाना जिनमें 'ग्राम' को प्रशासन की मूल इकाई का दर्जा दिया गया है- अन्य दो खंड और जिले हैं; (iii) पंचायतों को प्रशासनिक और वित्तीय

दोनों शक्तियों का हस्तांतरण; (iv) पांच वर्षों में एक बार पंचायतों की वित्तीय स्थिति की समीक्षा राज्य सरकारों को राज्य वित्त आयोग से करवाने की शक्ति; (v) पांच वर्षों में एक बार ''पंचायत चुनाव'' करने की जिम्मेदारी राज्य निर्वाचन आयोग को देना। (vi) सामाजिक दृष्टि से अल्प सुविधाप्राप्त वर्गों, जैसे SC/ST को उनकी जनसंख्या के अनुपात में निर्वाचित पंचायतों में सीटों के आरक्षण का प्रावधान करना; और (vii) आरक्षित और अनारक्षित दोनों, श्रेणियों के लिए कुल सीटों में कम से कम 33 प्रतिशत का अतिरिक्त आरक्षण महिलाओं के लिए करने का प्रावधान करना। अधिनियम पंचायत के सदस्य की अयोग्यता का भी प्रावधान करता है यदि वह किसी अन्य कानून द्वारा ऐसा अयोग्य है। अधिनियम पांच वर्षों में एक बार पंचायत के क्षेत्र में राज्य क्षेत्रीय निर्वाचित क्षेत्रों से ''प्रत्यक्ष निर्वाचन'' द्वारा सदस्य निर्वाचित होना आवश्यक बनाता है। ''पंचायतों'' और उसके सदस्यों की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व ऐसे तरीके से राज्यों द्वारा निर्धारित की जाती हैं कि वह ''स्वशासन की संस्थाओं'' के रूप में उन्हें कार्य करने के लिए सक्षम बनाते हैं। उनके कार्यों के क्षेत्र में सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने पर फोकस के साथ समग्र आर्थिक विकास के लिए योजनाएं और प्रकल्प तैयार करना तथा उनका क्रियान्वयन करना शामिल है। ये अधिनियम (अनुच्छेद 243जी के अधीन) 29 विषय विनिर्दिष्ट करता है जिनमें से पहले सात कृषि (और संबद्ध) विकास से संबंधित हैं। ये हैं: कृषि विस्तार सहित कृषि; (ii) भूमि सुधार, भूमि सुधार का क्रियान्वयन; भूमि चकबंदी और मृदा संरक्षण, (iii) लघु सिंचाई, जल प्रर्वधन और जल विभाजक विकास, (iv) पशु पालन, डेरी उद्योग और कुक्कुट पालन; (v) मत्स्यपालन, (vi) सामाजिक वानिकी और फार्म वानिकी, और (vii) लघु वन उत्पाद। अन्य 22 विषय ''उद्योग'' और ''सेवा क्षेत्रों'' से संबंधित है।

PRI के संसाधन: अधिनियम राज्य की ''संचित निधि'' से पंचायतों को सहायता अनुदान देने के अलावा; पंचायतों को निर्धारित प्रक्रिया और सीमा के अनुसार उपकर लगाने, एकत्र करने और समुचित कर, शुल्क, चुंगी और फीस लगाने और वसूलने का अधिकार भी देता है।

बोध प्रश्न 2

लगभग 50 शब्दों में उत्तर दीजिए।

1) भारत के संविधान में 1957 में PRI द्वारा विकेंद्रीकृत शासन को क्या प्रस्थिति प्रदान की गई है?

.....

.....

.....

.....

2) आप भारत में ''पंचायती राज संस्था की उत्पति'' के रूप में क्या निर्धारित करेंगे?

.....

.....

.....

.....

3) किस योजना में पहली बार PRI प्रशासित क्षेत्रों में बेहतर आर्थिक निष्पादन स्वीकार किया गया था? इस मान्यता के लिए मुख्य महत्त्व का तात्कालिक परिणाम क्या था?

.....

.....

.....

.....

4) मूल पंचायत विधेयक की चार मुख्य विशेषताएं क्या हैं जो बाद के प्रारूप में भी रखीं गई हैं जिसमें 1980 की दशाब्दी के अंत में यह भिन्न-भिन्न राज्य सरकारों द्वारा पारित किया गया था?

.....

.....

.....

.....

5) क्या CCA 1992 जनसंख्या के सुविधावंचित वर्गों के लिए पंचायतों में सीटों का कोई आरक्षण प्रदान करता है? ''कृषि और संबद्ध विकास'' के सुसंगत उन विशिष्ट क्षेत्रों का उल्लेख कीजिए जिन्हें CCA, 1992 में शामिल किया गया है?

.....

.....

.....

.....

6.5 कृषि विकास में PRI की भूमिका

जैसा कि ऊपर कहा गया है और इसे पुनः दोहराते हैं, CCA,1992 ने 29 विषयों को विनिर्दिष्ट किया है जिनमें से निम्नलिखित सात कृषि (और संबद्ध) विकास से संबंधित हैं: (i) कृषि विस्तार सहित कृषि, (ii) भूमि सुधार और भूमि सुधारों का क्रियान्वयन; भूमि चकबंदी, और मृदा संरक्षण (iii) लघु सिंचाई, जल प्रबंधन और जल विभाजक विकास, (iv) पशु पालन, डेरी उद्योग और कुक्कुट पालन (v) मत्स्य पालन, (vi) सामाजिक वानिकी और फार्म वानिकी और (vii) लघु वन उत्पाद। CCA 1992 के क्रियान्वयन की लगभग एक दशाब्दी यह पाया गया था कि राज्यों में PRI सशक्तीकरण की प्रक्रिया न केवल विविध स्वरूपों में अपनाई गई है बल्कि

कार्यक्रमों की योजना और क्रियान्वयन में PRI को जोड़ने की प्रक्रिया अभी स्थापित की जानी थी। एकीकरण की इस प्रक्रिया को आसान बनाने के लिए, योजना आयोग ने 2001 में दो विशिष्ट उद्देश्यों से कार्यदल (TF) गठित किया। ये थे: (i) केंद्रीय मंत्रालयों और विभागों की स्कीमों में PRI की सहभागिता के लिए प्रचालनात्मक दिशानिर्देशों का निरूपण करना और (ii) गैर-सरकारी संगठनों से PRI के अंतर्संबंध के लिए मानदंड का सुझाव देना। पूर्वोक्त को महत्त्वपूर्ण समझा गया, क्योंकि NGO की सहभागिता को कार्यक्रमों के सद्भावपूर्ण क्रियान्वयन के लिए निरंतर महत्त्वपूर्ण स्वीकार किया जा रहा था। इस अनुभाग में हम कृषि विकास के निम्नलिखित तीन मुख्य क्षेत्रों के लिए अनुप्रयोज्य योजनाओं की चर्चा संक्षेप में करेंगे जिनकी सिफारिश PRI द्वारा की निश्चित भूमिका के लिए की गई है। ये हैं : (i) फसल विकास, (ii) ऋण और सहयोग; और (iii) फसल बीमा। इस अनुभाग में शामिल की गई सिफारिशें निम्नलिखित से संबंधित हैं: (i) कृषि कार्यों से संबंधित विशिष्ट कार्यकलाप; और कार्यों का समन्वय करने में PRI द्वारा निभाई गई भूमिका का विनिर्देशन।

6.5.1 फसल विकास

कृषि विस्तार और अनुसंधान संगठनों के अधिकारियों की क्रियान्वयन मशीनरी को PRI के प्रत्यक्ष पर्यवेक्षण और नियंत्रण के अधीन अपने कार्यक्रमों की योजना बनानी और क्रियान्वयन करनी चाहिए। इस संबंध में कार्यकलापों की पांच अवस्थाओं की पहचान की गई है।

- कार्यकलापों की **पहली** अवस्था में निश्चित क्षेत्र में विस्तारित की जाने वाली फसल के संबंध में प्रौद्योगिकियों का निर्धारण अंतर्निहित है। PRI समुचित स्तर पर सम्मिलित संगठनों के अनुसंधान और तकनीकी प्रमुखों को किसानों के विचारों का ज्ञान प्रदान करेंगे।

- **दूसरी** अवस्था में उन क्षेत्रों की पहचान अंतर्निहित है जहां प्रदर्शन कार्यक्रम संचालित किए जाने हैं। PRI उन स्थानों का निर्धारण करने में निर्णायक भूमिका निभाएंगे जहां उनके प्रयोजन के क्षेत्र में प्रयोग की जाने वाली नई प्रौद्योगिकी का प्रयोग होना है। 'खंड पंचायत' विभिन्न पंचायतों में स्थलों के चयन पर निर्णय करेगा जबकि लाभभोगियों का निर्धारण ग्राम पंचायतों का विशेषाधिकार होगा।

- घटनाओं की **तीसरी** अवस्था में निवेशों की व्यवस्था अंतर्निहित है। इसे जिला/खंड स्तर पर PRI के निकटतम परामर्श से किया जाएगा ताकि प्रभावकारी आपूर्ति और वितरण के अनुसार पारदर्शिता और उत्तरदायित्व सुनिश्चित किया जा सके।

- **चौथी** अवस्था में तकनीकी कर्मियों द्वारा वास्तविक प्रदर्शन अंतर्निहित है। इस अवस्था में स्थानीय स्तर पर PRI व्यापक रूप में प्रदर्शन का प्रचार करेंगे ताकि समीपवर्ती क्षेत्रों के किसानों की भागेदारी सुनिश्चित की जा सके। खंड/जिला स्तरों पर PRI निकायों की सहभागिता से अन्य कार्यक्रमों से सहसंबंधन विकसित हो सकता है ताकि तकनीकी कर्मिकों से किसानों की अधिक सहभागिता और

प्रभावशील आदान-प्रदान प्राप्त हो सके। PRI तकनीकी कार्मिकों को प्रदर्शन का पुनर्निवेशन भी प्रदान कर सकते हैं जो प्रदर्शन कार्यों की अनुवर्ती अवस्था में दोषनिवारण में सहायक होगा।

- कार्यकलापों के अनुक्रम की **अंतिम** अवस्था में निवेशों का वास्तविक वितरण सम्मिलित किया जा सकता है जो प्रमाणीकृत बीजों, मिनीकिटों, फार्म औजारों, मशीनरी, छिड़काव सेट, माइक्रोसेट आदि के रूप में हो सकते हैं। वितरण को इस प्रावस्था में PRI की सहभागिता पारदर्शिता/जवाबदेही/समता का विचार सुनिश्चित करने के लिए, और प्राप्त निवेशों के अनुसार लाभभोगियों की संतुष्टि सुनिश्चित करने के लिए भी महत्त्वपूर्ण है। यह वास्तविक क्रियान्वयन की अनुवर्ती अवस्थाओं में कार्यकलाप की निगरानी करने के लिए भी सहायक होगा।

6.5.2 ऋण और सहयोग

इस उप क्षेत्र के अधीन प्रमुख कार्यकलापों में शामिल हैं: (i) प्राथमिक सहकारी समितियों के माध्यम से किसानों को ऋण का वितरण; (ii) कार्यशील पूँजी के रूप में परियोजनाओं के विकास के लिए सहकारी संस्थाओं की सहायता; और (iii) आधारभूत संरचना विकास सहायता। ग्राम प्रचायतों की सहभागिता निम्नलिखित में होनी चाहिए: (i) निर्धारित मानदंडों के अनुसार लाभभोगियों का चयन, (iii) प्राथमिक ऋण समितियों द्वारा ऋण योजना तैयार करना, और (iii) यह सुनिश्चित करना कि ऋण लाभभोगियों को ठीक समय में मिलता है। उन्हें निम्नलिखित में भी शामिल किया जाना चाहिए: (i) प्राथमिक ऋण समितियों की सदस्यता का विस्तार करना; (ii) ऋण लेने वालों को अपना ऋण समय पर चुकाने के लिए प्रेरित करना और (iii) अत्यंत वास्तविक मामलों में जहां ऋणी ऋणदाता संस्थाओं को अपनी कठिनाइयां स्पष्ट करते हुए अपने ऋण चुकाने में असमर्थ हैं, परन्तु उसे दुराग्रही चूककर्ताओं के विरुद्ध कार्यवाही भी प्रारंभ करनी चाहिए। खंड स्तर पंचायतों की भूमिका: ऋण की राशि वितरण का निरीक्षण करना, अन्य निवेश प्रदान करने वाले कार्यक्रमों से सहसंबंध विकसित करना, ऋण लेने वालों को अपने ऋण चुकाने में तैयार करना और जहां प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण ऋण चुकौती में विलंबित हुआ है, वहां ऋण चुकौती योजना पुन: बनाने में सहायता करनी होगी। इसके अतिरिक्त खंड स्तर की पंचायतों की यह भूमिका भी होगी: (i) ऐसी संस्थाओं की पहचान करना, जिन्हें परियोजना पूरी करने के लिए ऋण की आवश्यकता है, (ii) परियोजना प्रस्ताव/रिपोर्ट तैयार करने में उनकी सहायता करना, और (iii) जिला परिषदों की सहायता से ऋण संस्थाओं से समय पर ऋण की राशि का वितरण सुनिश्चित करना। उन्हें यह सुनिश्चित करने के लिए ऐसी संस्थाओं के कार्यकलापों की निगरानी भी करनी चाहिए कि प्राप्त सहायता का उपयोग उचित रूप से हुआ है।

6.5.3 फसल बीमा

इसके अधीन किए गए कामों में शामिल हो सकते हैं: (i) लाभभोगियों की पहचान, (ii) दावों की तैयारी, (iii) दावों के शीघ्र निपटान में सहायता करना; और (iv) सुनिश्चित करना कि लाभभोगी क्षतिपूर्ति राशि का भुगतान समय पर प्राप्त करते हैं।

लाभभोगियों की पहचान करने और ब्यौरों की यथाविधि संवीक्षा करने के बाद दावों की तैयारी में सहायता करने में ग्राम पंचायतों को शामिल किया जाना चाहिए। खंड स्तर और जिला स्तर की पंचायतें भी दावों के शीघ्र निपटान करने में भूमिका निभा सकती हैं। तब ग्राम स्तर की पंचायत सुनिश्चित कर सकेगी कि किसी परेशानी के बिना सही लाभभोगी दावे का भुगतान प्राप्त करते हैं। इसके अलावा, वे उन किसानों की भी सहायता कर सकते हैं जिनकी फसलें नष्ट हो गई है या अगली खेती के लिए तैयारी करने में क्षति हुई है। ये सभी ऐसे कार्यकलाप हैं जिनमें किसानों का विश्वास प्राप्त करने के उद्देश्य से पंचायतों द्वारा पहले से ही सक्रिय भूमिका निभाए जाने की काफी गुंजाइश होती है, ताकि वे बीमा प्रस्तावों/दावों के मामले में उनकी मध्यस्थता ले सकें। कुछ समयावधि के बाद प्रक्रिया/पद्धति को सरल और कारगर किया जा सकता है ताकि कोई भी किसान या किसानों का समूह हानि/जोखिमों के लिए अपने आप को सुरक्षित किए बिना फसल आरंभ न कर सके।

उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2001 तक, अर्थात् CAA, 1992 के अधिनियमन के लगभग एक दशक के बाद भी PRI के लिए ऐसी निश्चित भूमिका का अभी निर्धारण किया जाना था। कार्यदल की रिपोर्ट ने चार अन्य क्षेत्रों, अर्थात् भूमि और जल संसाधन विकास, निवेशों का उत्पादन, सिंचाई और प्राकृतिक संकटों के लिए सहायता के लिए PRI की ऐसी ही भूमिका का प्रस्ताव प्रस्तुत किया है। अगले भाग में, हम संक्षेप में समीक्षा करेंगे, कि निम्नतम स्तर तक कार्यकरण की अपनी प्रत्याशित भूमिका में PRI की अपेक्षित प्रक्रिया 2001 के बाद के वर्षों में कहां तक ग्रहण की गई है।

6.6 2001 के बाद के वर्षों में PRI की प्रगति की समीक्षा

PRI की प्रगति का आकलन करने की एक विधि अनुभवसिद्ध सूचकों के आधार पर ''स्थानीय स्वशासन (LSG) का आकार और महत्त्व'' देखना है, जैसे (i) समग्र सार्वजनिक क्षेत्र के व्यय की तुलना में LSG का व्यय, और (ii) देश के कुल GDP में LSG के व्यय का सापेक्ष भाग। भारत द्वारा इस संबंध में की गई प्रगति और भी समझी जा सकती है, यदि जब हम अन्य देशों की तुलना में उसका तुलनात्मक चित्र बनाते हैं जिन्होंने वैसी ही विकेंद्रीकृत शासन संरचना पहले से ही स्थापित की हुई है। स्थानीय सरकारों के 2000 के बाद के प्रारंभिक वर्षों के संयुक्त भाग का तुलनात्मक संक्षिप्त विवरण (जिसमें PRI और शहरी स्थानीय निकायों (ULB) का शेयर शामिल है, देखिए शब्दावली) प्रकट करता है कि भारत का भाग OECD देशों, और ब्राजील की तुलना में काफी कम था। (तालिका 6.1) GDP के अनुपात के रूप में स्थानीय सरकारों का कुल व्यय भारत का ये अंश और भी कम था। यह ब्राजील के 6.5 प्रतिशत और OECD देशों के 13.8 प्रतिशत की तुलना में केवल 1.7 प्रतिशत था। यद्यपि यह ऐसा चित्र है जो 2002 के बाद के वर्षों में देश के अंदर अंतर्राष्ट्रीय तुलनात्मक परिप्रेक्ष्य में प्राप्त होता है, फिर भी ये वर्ष 2002-03 में 356 रु. की सभी राज्यों की औसत से बढ़कर वर्ष 2007-08 में 779 हो गया। ये PRI के प्रति व्यक्ति व्यय (PCE) में सुधार का संकेत है। इस संबंध में अंत: राज्य स्थिति में अंतर भी नीचे आ रहा है।

तालिका 6.1: स्थानीय सरकारों का आकार और महत्त्व

देश	कुल सार्वजनिक क्षेत्र व्यय की तुलना में स्थानीय सरकार के व्यय का प्रतिशत	GDP की तुलना में स्थानीय सरकार के व्यय का प्रतिशत
OECD	20–35	13.8
ब्राजील	15	6.5
भारत	5.1	1.7

स्रोत: ओम्मेन, 2010, टिप्पणियां (i) (OECD): आर्गनॉइजेशन फॉर इकनामिक कोऑपरेशन एंड डेवेलेपमेंट (ii) आंकड़े वर्ष 2002–03 से संबंधित है।

उदाहरण के लिए, 2002–03 में न्यूनतम: अधिकतम अनुपात 75.7 था (बिहार का PCE सबसे कम 18 रु. था और उच्चतम महाराष्ट्र में 1,364 रु. था) यह न्यूनतम–अधिकतम अनुपात 2007–08 में 61.8 पर नीचे खिसक गया, एक बार फिर बिहार का PCE 68 रु. न्यूनतम पर था और कर्नाटक का 2,967 रु. था। प्रसंगत: तुलनात्मक विवरण से प्रगट होता है कि CCA, 1992 का बिहार पर कम से कम प्रभाव रहा है। कुछ अन्य राज्यों, जैसे राजस्थान, पंजाब और उत्तर प्रदेश की स्थिति भी बेहतर नहीं रही। इस संदर्भ में, यह नोट करना महत्त्वपूर्ण है कि तेरहवें केंद्र वित्त आयोग ने टिप्पणी की है कि ''यद्यपि यह केंद्र और राज्य सरकार/वित्त आयोगों के लिए है कि वे धन, कार्यकर्ताओं और तकनीकी सहायता से विकेंद्रीकृत योजना और शासन की प्रक्रिया में सहायता करें, पिछले 15 वर्षों के दौरान देखा गया है, कि समानांतर एजेंसियों की कई गुणा वृद्धि हुई है जो स्थानीय सरकारों को सौंपे गए प्रकार्यात्मक क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं और भारत के संघीय ढांचे में अपनी भूमिका को भी विकृत करते हैं। इसलिए उपलब्ध प्रेक्षण और सूचक सुझाते हैं कि भारत को PRI (और ULB) की संवैधानिक रूप से गारंटी प्राप्त भूमिका को प्रभावी ढंग से सुदृढ़ करने के लिए अभी लंबा रास्ता तय करना है।

6.7 PRI और भूमि अधिग्रहण

जैसा कि हमने इकाई 1 में पढ़ा है, अर्थव्यवस्था के श्रमिक बल के वितरण में संरचनात्मक परिवर्तन हुए हैं। एक कृषि प्रधान व्यवस्था में निम्न उत्पादक कृषि से अधिक उत्पादनकारी गैर-कृषि कार्यों के लिए के लिए मार्ग धीरे-धीरे प्रशस्त होता है। ऐसी स्थिति में श्रमिक बल के अलावा गैर-कृषि सेक्टर के विस्तार के लिए अपेक्षित भूमि भी कृषि सेक्टर से आती है। जैसा कि हम अब जानते हैं, बहुत बड़ी मात्रा में भूमि और छोटे-छोटे भू-खंड कई उन छोटे/सीमांत किसानों के पास हैं जो या तो जीवन निर्वाह के लिए अपनी भूमि पर निर्भर रहते हैं या अन्य मामलों में वे केवल दूरवासी जमींदारों के स्वामित्व में है। ऐसी परिस्थिति में भूमि अधिग्रहण के मुद्दे का महत्त्वपूर्ण सामाजिक आयाम, विशेषकर छोटे भूमिधारक किसानों के लिए होता है। इसे ध्यान में रखते हुए सरकार ने सम्मतियों और विचार विनिमय के लिए ''भूमि अधिग्रहण और पुनर्वास तथा पुनर्स्थापन (R and R)'' विधेयक (2011) का

मसौदा बहस के लिए सार्वजनिक क्षेत्र में रखा है। इस इकाई में इस विधेयक की मुख्य विशेषताएं शामिल करने के लिए सुसंगत मुख्य बिंदु यह है कि प्रस्तावित विधेयक इसे अनिवार्य बनाता है कि ''ग्राम सभा'' से परामर्श किया जाए और प्रस्तावित भूमि अधिगृहीत/अंतरित किए जाने से पहले R & R पैकेज निष्पादित किया जाए। इसे ध्यान में रखते हुए हम यहां इस विधेयक की मुख्य विशेषताओं का संक्षेप में उल्लेख करेंगे जो निम्न प्रकार हैं:

1) ऐसे भूमि अधिग्रहण के लिए आर एवं आर पैकेज आवश्यक रूप से निष्पादित किया जाना चाहिए, जो 100 एकड़ से अधिक हो।

2) कानून बहुफसली सिंचित भूमि की खरीद निषिद्ध करता है।

3) सामान्यतया भूमि अधिग्रहण में राज्य सरकार की कोई भूमिका नहीं होती है फिर भी, सरकार ऐसा तभी करेगी यदि हस्तक्षेप आम जनता के लिए हित में हो।

4) अंधाधुंध अधिग्रहण से सुरक्षा करने के लिए विधेयक में राज्यों द्वारा एक समिति गठित करना आवश्यक है। समिति ''सामाजिक प्रभाव आकलन'' की दृष्टि से ''सार्वजनिक प्रयोजन'' के पक्ष की जांच करेगी।

5) यदि अधिगृहीत भूमि का प्रयोग उसके अधिग्रहण के पांच वर्ष के अंदर उस प्रयोजन के लिए नहीं किया जाता है जिसके लिए इसे प्रारंभ में स्वीकृत किया गया था, उसे भूमि मूल स्वामियों को वापस कर दिया जाएगा।

6) ''ग्राम सभा'' से परामर्श की प्रक्रिया अन्य कानूनों, जैसे अनुसूचित क्षेत्रों के लिए पंचायत विस्तार (PRBA) अधिनियम 1996, अनुसूचित कबीले और अन्य परम्परागत वनवासी (वन अधिकारों की मान्यता), अधिनियम 2006 आदि से अनुरूपता स्थापित करने की दृष्टि से भी किया जाता है।

7) विधेयक जब भी अधिनियम बनाया जाता है, उस की श्रेष्ठता 8 अन्य कानूनों पर होगी, ये सभी भूमि अधिग्रहण से संबंधित हैं। इसलिए इनके प्रावधान अन्य विद्यमान कानूनों में उपबंधित सुरक्षणों के अलावा होंगे और उनके अल्पीकरण के लिए नहीं होंगे।

8) भूमि स्वामी और भूमि खोने वाले दोनों की क्षतिपूर्ति की जाएगी। प्रत्येक प्रभावित परिवार को एक नौकरी या 2 लाख रुपये की नकद क्षतिपूर्ति दी जाएगी। जिन्होंने भूमि अधिग्रहण प्रक्रिया में अपना मकान खोया है, उन्हें विनिर्दिष्ट विस्तार/क्षेत्रफल का तैयार मकान दिया जाएगा।

विधेयक इस तर्क के साथ चर्चाधीन है, कि मूल प्रावधान जो प्रभावित लोगों का पक्ष ले रहे थे, उन्हें कमजोर किया किया जा रहा है। ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना उल्लेख करती है कि पुनर्स्थापन और पुनर्वास (R and R) की वर्तमान व्यवस्थाएं आदिवासियों के हितों के लिए हानिकारक और प्रतिकूल हैं। इसका कारण यह है कि ''जनजाति भूमि का समूह'' नए आर्थिक वितरण के अधीन तेजी से घट रहा है। इस प्रकार ''भूमि अधिग्रहण'' का मुद्दा प्रमुख विवाद का विषय हो गया है

जिसके लिए सामाजिक सक्रियतावादी दृढ़ता से लड़ रहे हैं। कृषि विकास के दृष्टिकोण से, भूमि उपयोग स्वरूप पर इसका गंभीर प्रभाव होगा।

बोध प्रश्न 3

लगभग 50 शब्दों में उत्तर लिखिए।

1) किस दृष्टि से ''ग्राम पंचायतों'' की सहभागिता को ''फसल बीमा'' के मामले में उपयोगी माना गया है?

.....

.....

.....

.....

2) कौन से दो अनुभवसिद्ध सूचक हमें अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य से PRI की उसकी नियत भूमिका से सन्निहित की सीमा के बारे में बताते हैं? कौन सा अनुभवसिद्ध संकेत सुझाता है कि 2001 के बाद के वर्षों में भारत में PRI के कार्यकरण में सुधार है?

.....

.....

.....

.....

3) किस स्थिति में ''भूमि अधिग्रहण'' पर प्रस्तावित विधायन राज्य सरकार के हस्तक्षेप के प्रावधान की व्यवस्था करता है? ''भूमि अधिग्रहण'' की प्रक्रिया भारत में कृषि विकास को किस तरीके से प्रभावित कर सकती है?

.....

.....

.....

.....

6.8 सारांश

इकाई सामान्य रूप में आर्थिक विकास के लक्ष्यों को आगे बढ़ने के लिए संस्थागत विकास के महत्त्व को रेखांकित करती है। इसमें, ग्रामीण विकास नीति की PRI केंद्रित विकास के विचार को महत्त्व दिया गया है। नीति का आग्रह, विशेष रूप से समावेशी प्रगति के विकास पर रहा है। ये चिंताएं सरकार द्वारा हाल ही के वर्षों में दिखाई हैं। राजनीतिक और संस्थागत प्रगति के बावजूद अनुसूचित जनजाति समुदाय में पहले की भांति सीमांत वर्गों की बढ़ती हुई दूर जाने की प्रवृत्ति भी रही है। सामाजिक रूप से और आर्थिक रूप से सुविधावंचित ऐसे समुदायों का आर्थिक प्रक्रिया की मुख्य धारा में एकीकरण करना हाल ही के समय में महत्त्वपूर्ण नीति फोकस

रहा है।, ''भूमि अधिग्रहण'' अधिनियमों में इसके लिए उपयुक्त क्षतिपूर्ति और R&R खंडों को भी लागू किया गया है। इन विकास कार्यों का भारत में भूमि उपयोग प्रतिरूप और कृषि विकास पर प्रभाव होगा। परन्तु 1992 में PRI को दी गई संवैधानिक दर्जे के बावजूद अधिनियम पारित होने के दस से अधिक वर्षों के बाद भी ऐसे कार्यों में उसकी उचित भूमिका ग्रहण का बहुत कम संकेत मिलता है, जिनकी अधिनियम की रचना में संकल्पना की गई थीं। परन्तु 2001-10 की दशाब्दी के मध्य के दौरान PRI का बढ़ा हुआ प्रति व्यक्ति व्यय (PCE) कुछ अनुभव सिद्ध साक्ष्य दे रहा है। अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि सबसे उत्तम निष्पादन करने वाले और सबसे कम निष्पादन करने वाले राज्यों के बीच PCE के अंतर में गिरावट शुरू हुई है। यह नोट करना भी महत्त्वपूर्ण है कि ग्राम सभाओं को ग्रामीण क्षेत्रों में MGNAREGA में विभिन्न कार्यों में परिसंपत्तियों का निर्माण करने के बारे में निर्णय करने में प्रमुख स्थान दिया गया है। (अधिक विस्तार के लिए इकाई 25 देखिए) परिणामस्वरूप गांवों में गरीबों और सीमांतों के लिए रोजगार के अवसर पैदा करने में PRI की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। इन सभी को ध्यान में रखते हुए सामान्य रूप में ग्रामीण भारत के, विशेष रूप में उसके कृषि क्षेत्र के, विकास के अच्छे अवसर हैं।

6.9 शब्दावली

पंचायती राज : इसका संबंध शासन व्यवस्था से है जिसमें ग्रामस्तर पर 'ग्राम पंचायतें' व्यवस्था में तीन स्तरों, अर्थात् ग्राम, खंड और जिला के प्रशासन की मूल इकाई होती है।

संपत्ति अधिकार : इसका संबंध समाज/अर्थव्यवस्था में संस्थागत प्रगति के स्तर से है। यह कहा गया है कि वर्तमान संपत्ति अधिकार की व्यवस्था प्राय: मौजूदा राजनीतिक ढांचे/ व्यवस्था की कोटि का सूचक है। राजनीतिक व्यवस्था की परिपक्वता ''अर्थव्यवस्था में सुदृढ़ संपत्ति अधिकारों के विकास के लिए आवश्यक और पर्याप्त दोनों शर्तें हैं।''

CAA 1992 : यह लोकतांत्रिक तरीके में लोगों की प्रत्यक्ष सहभागिता द्वारा स्थानीय विकास के मुद्दों का मार्ग प्रशस्त करने के लिए PRI को संवैधानिक प्रस्थिति प्रदान करने में प्रमुख विधायी ऐतिहासिक कदम का द्योतक है।

भूमि अधिग्रहण : यह इस समय देश में गैर-कृषि सेक्टर के आधार का विस्तार करने के लिए अपेक्षित भूमि के संदर्भ में बड़ा मुद्दा है। प्रक्रिया से कृषि प्रयोजन

के लिए उपलब्ध भूमि के अंश की तुलना में भूमि उपयोग के प्रतिरूप पर गंभीर प्रभाव होने की आशंका है।

शहरी स्थानीय निकाय (ULB): यह ठीक PRI की भांति नगर शासन के लिए समांतर विकेंद्रीकृत प्रशासनिक व्यवस्था है। इससे गांवों की भांति वैसी ही व्यवस्था करने की आशा की जाती है। जैसे 73वें संशोधन ने PRI के लिए संवैधानिक दर्जा दिया है, 72वें CCA ने शहरी क्षेत्रों के विकेंद्रीकृत प्रशासन के लिए वैसा ही दर्जा प्रदान किया।

6.10 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Alagh, Yoginder, K., 'Panchayati Raj and Planning in India: Participatory Institutions and Rural Roads', Asian Institute of Transport Development, New Delhi.

Planning Commission (2001): Report of the Task Force on Panchayati Raj Institutions (PRIs), New Delhi.

Oommen, M. A. (2010): Have the State Finance Commissions Fulfilled Their Constitutional Mandates (EPW, July 24, 2010) and The 13th Finance Commission and the Third Tier (EPW, November 27, 2010).

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) भाग 6.2 देखिए और उत्तर दीजिए।

2) भाग 6.2 देखिए और उत्तर दीजिए।

3) भाग 6.2 देखिए और उत्तर दीजिए।

4) भाग 6.2 देखिए और उत्तर दीजिए।

5) भाग 6.2 देखिए और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 2

1) भाग 6.3 देखिए और उत्तर दीजिए।

2) भाग 6.3 देखिए और उत्तर दीजिए।

3) भाग 6.3 देखिए और उत्तर दीजिए।

4) भाग 6.4 देखिए और उत्तर दीजिए।

5) भाग 6.4 देखिए और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 3

1) उपभाग 6.5.3 देखिए और उत्तर दीजिए।

2) भाग 6.6 देखिए और उत्तर दीजिए।

3) भाग 6.7 देखिए और उत्तर दीजिए।